International Journal of Research in Economics and Social Sciences(IJRESS)
Available online at: http://euroasiapub.org
Vol. 8 Issue 2, February- 2018
ISSN(o): 2249-7382 | Impact Factor: 6.939 |

कबीरदास दास का जनजागरण एवं सुधारवादी दृष्टिकोण

संतोष कुमार यादव

शासकीय श्यामा प्र0मुखर्जी महा0
सीतापुर,जिला– सरगुजा छ0ग0

कबीर दास हिन्दी के अत्यन्त विवादास्पद कवि हैं। आलोचकों का एक शिविर यदि उन्हें किसी भी प्रकार कवि मानने को प्रस्तुत नहीं है तो दूसरा शिविर उनकी रचनाओं में काव्य की मूल आवश्यकताओ को प्रचुर परिणाम में देखता है। इन दो अतिवादी शिविरों के बीच पड़ जाने से कबीर दास और उनके काव्य को अनेक हानियाँ उठानी पड़ी है तो लाभ भी कम नहीं हुए है। विवाद के फलस्वरूप कबीर दास के काव्य के विविध पक्षों और इन आलोचकों का ध्यान गया है और अनेक दृष्टिकोणों से कबीर अध्ययन संभव हुआ है। वास्तव में विवाद के धक्कों से दुर्बल अथवा सामान्य कवि ही घाटे में रहता है किन्तु एक समृद्ध कवि तो प्रत्येक विवाद के बाद और भी श्रेष्ठ और सम्पन्न कवि के रूप में स्थापित होता है। हिन्दी के अन्य प्राचीन कवियों की भांति कबीरदास के जीवन से संबंधित प्रमाणिक सामग्री का प्रायः अभाव है। कबीर दास ने अपने जीवन वृत्त के संबंध में यत्र–तत्र केवल प्रासंगिक उल्लेख ही किए हैं।

हिन्दी के अन्य प्राचीन कवियों की भांति कबीरदास के जीवन से संबंधित प्रमाणिक सामग्री का प्रायः अभाव है। कबीर दास ने अपने काव्य में अपने जीवन वृत्त से संबंधित यत्र–तत्र केवल प्रासंगिक उल्लेख ही किए हैं। जनश्रुतियों और किवदंतियों के कारण अधिकांश मध्यकालीन कवि ऐतिहासिक व्यक्तियों की अपेक्षा पौराणिक पुरूष अधिक बन गये हैं। अतः साक्ष्य तथा बर्हिसाक्ष्य के आधार पर कबीर दास के जीवन –चरित्र की केवल स्थूल रूपरेखा ही तैयार की जाती है। कबीर के अध्येताओं में मतभेद हैं। कबीर साहब के प्रमुख शिष्य धर्मदास के एक पद के अनुसार कबीर साहब का जन्म चौदह सौ पचपन भए हुआ था। पूरा पद इस प्रकार है –

''चौदह सौ पचपन साल गए, चन्द्रवार एक ठाट ठए।
जेठ सुदी बरसायत को, पूरनमासी प्रगट भए।।(1)

कबीर के जन्म –स्थान के संबंध में भी निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। ऐसा कहा जा सकता है कि कबीर दास काशी के एक ब्राम्हण विधवा की संतति थे। लोक लाज के भय से विधवा ब्राम्हणी ने अपने नवजात शिशु को एक जलाशय के किनारे छोड़ दिया था। नीरू जुलाहे और उसकी पत्नी नीमा को यह बालक जलाशय के किनारे ही प्राप्त हुआ था। यह जलाशय कहां है – इस संबंध में अभी तक निश्चयपूर्वक कुछ भी कहना विद्वानों के लिए संभव नहीं हो पाया है। श्री गुरूग्रंथ साहब, राग रामकली, पद तीन के अनुसार कबीर दास का जन्म महगर में हुआ था किन्तु ग्रंथ साहब के ही राम गउड़ी के पन्द्रहवें पद के अनुसार –

''सकल जनम सिवपुरी गँवाया।
मरती बार मगहर उठि आया।।(2)

जिस युग में कबीर ने जन्म लिया वह युग धार्मिक जटिलताओं का युग था। प्रत्येक मत अपने मत के अलावा अन्य मतों को हीनता की दृष्टि से देखता था , इस कारण समाज में पाखण्ड का साम्राज्य हो रहा था। कबीर समाज के सजग प्रहरी थे। कबीर गंभीर और भेदक दृष्टि के व्यक्ति थे। अपनी इस दृष्टि से उन्होंने सामाजिक अधोगति एवं पतन का कारण देखा और एक सामान्य सत्य का स्वरूप उपस्थित कर उसे सुधारने का प्रयत्न किया। कबीर का उद्देश्य बुराइयों को दूर करके सद्वृत्तियों और श्रेष्ठ विचारों का विकास करना था। कबीर दास जी ने भारतीय संस्कृति के विकास की श्रृंखला में एक नई कड़ी जोड़ दी, जिसके पीछे कान्तिमान कड़ियों की लड़ी लग गई कबीर ने जीवन के सभी स्तरों के क्रांति में स्मरणीय बीज लाये, उन्हें सींचा और पल्लवित किया।

कबीर अपने युग की उपज :

प्रत्येक साहित्यकार अपने युग से प्रेरित होता है। युग की परिस्थितियों में से प्रभावित होकर ही साहित्य –सृजन करता है। कबीर अपने युग की उपज थे। उन्होंने वही कहा जो उन्होंने भोगा, जो उन्हें सत्य परम्परा से सत्य मिला। उसे उन्होंने पहचाना, अनुभव किया और

उसे वाणी दी। कबीर का साहित्य समाज की मांग थी। उन्होने युग की नाड़ी को परख कर अनुकूल चिकित्सा की ज्ञानी होते हुए भी उन्होंने स्वयं को समाज से पृथक नहीं रखा वरन् अपने ज्ञान से समाज का वास्तविक हित किया। उन्होंने अपने समय की विभिन्न सामाजिक रीति –नीतियों का सूक्ष्म निरीक्षण करके उनकी सार्थकता पर विचार किया और व्यर्थ की मान्यताओं , रूढ़ियों व व्यर्थ की जीवन पद्धतियों का प्रबल विरोध किया। वास्तव में प्रिय को पाना सहज नहीं है। उसके लिए अनेक कष्ट सहने पड़ते हैं। अनेक कष्टों को झेलने के बाद प्रिय का साक्षात्कार हो जाता है। सभी सन्त कवियों के काव्य में थोड़ा बहुत रहस्यवाद मिलता है, पर उनका काव्य विशेषकर कबीर का ही ऋणी है।

परिस्थितियाँ :

कबीर का आगमन ऐसे संघर्षमय समय में हुआ था, जब देश राजनैतिक, सामाजिक एवं धार्मिक सभी दृष्टियों से पतन की ओर उन्मुख हो रहा था। देश में मुसलमानों का राज्य स्थापित हो चुका था। राजनीतिक अत्याचार वं भ्रष्टाचार दिन– प्रतिदिन बढ़ते जा रहे हैं। समाज में प्रायः मर्यादा समाप्त हो चुकी थी। समाज मुख्यतः दो वर्गो विभाजित हो चुका था हिन्दू और मुस्लिम। हिन्दू समाज में जाति, वर्ग द्वारा छुआछूत आदि का बोल–बाला था तथा मुस्लिम शासक सुरा–सुन्दरी में डूबे रहते थे। सामाजिक शोषण बढ़ता जा रहा था। धर्म के नाम पर, समाज में अनेक बुराईयां पैदा हो गई थी, मुस्लिम शासक अपने धर्म का प्रचार कर रहे थे या हिन्दुओं के धार्मिक स्थल मन्दिर आदि नष्ट करके उन्हें मुसलमान बनाने का प्रयास कर रहे थे। ऐसे विषम समय में कबीर की वाणी ने जन–जन में नवीन स्फूर्ति एवं जागृति का संचार किया। उन्होंने खण्डन –मण्डन की प्रवृत्ति अपनाते हुए सामाजिक दुर्दशा पर आक्रोश व्यक्त किया तथा व्यंग्य –बाणों की वर्षा से सभी का मार्ग प्रशस्त किया।

कबीर कवि अथवा सुधारक :

कबीर भक्त एवं सन्त पहले थे कवि बाद में। कविता करना उनका उद्देश्य नहीं था वरन् परमात्मा की भक्ति करना और उनका ध्यान में रहना ही उनका ध्यान में रहना ही उनका अभिष्ट था। उन्होंने तो मसी– कागद छूआ ही नहीं था, फिर कवि कर्म का विधिवत अध्ययन किस प्रकार करते ? अतः कविता करना उनका ध्येय नहीं था। डॉ. हजारी प्रसाद

द्विवेदी का मत दर्शनीय है – ''कबीर मूलतः भक्त थे। भक्ति उन बाह्य चारों के जंजालों का साक करने की जरूरत महसूस हुई, जो अपनी जड़ प्रकृति के कारण विशुद्ध चेतन तत्व उपलब्धि में बाधक है। यह बात ही समाज सुधार और साम्प्रदायिक ऐक्य यही विधात्री बन गई है।'' यद्यपि कविता करना कबीर का ध्येय नहीं था। फिर भी कवि ह्रदय की सच्ची अनुभूति सरसता एवं भाव प्रवणता उनके काव्य में सर्वत्र विद्यमान है। उन्होंने समाज की विषमता कृत्रिमता और आडम्बर को सीधे सरल ढंग से सहज ही अभिव्यक्त कर दिया है। साथ ही भक्त ह्रदय की भावुकता निनम्रता, दैन्य और विषाद को भी उन्होंने वाणी दी है। ऐसे स्थलों पर उनका कवि रूप सजग रहा है। डॉ. शिव कुमार शर्मा ने सत्य लिखा है – ''कबीर के कवि में यथेष्ठ सरलता, द्रेवणशीलता और मार्मिकता है कबीर का काव्य उस स्थान पर तो बहुत ऊंचा उठ गया है, जाहं उन्होंने विरहिणी आत्मा कर स्पन्द , ह्यस और रूदन, मिलन बिछुड़ने के साकार चित्र अंकित कर दिए हैं। ऐसे स्थानों पर उनके संत साधक, कवि , भक्त , सुधारक और नेता समस्त रूप एक हो गये हैं और दरअसल यहां पर उनका काव्य और एक अलौकिक वस्तु बन गया है।

स्पष्ट है कि कवि की शक्ति कबीर के पास थी। उसमें जनता के तात्कालिक जीवन को अभिव्यक्ति दी। उन्होने जनता की भ्रांतियों को दूर करके नये, जीवन का उद्घाटन किया और नये जीवन मूल्य की स्थापना करना सशक्त कवि का धर्म (कर्म) है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने उन्हें इसी अर्थ में कवि माना है। वे जहां शुद्ध व्यंग्यात्मक भूमि पर उतर आते हैं। वहां बाहर से उपदेशात्मक होते हुए भी भीतर से कहीं कवि वृत्ति में रम जाते हैं। वास्तव में कबीर मूल रूप से कवि है। उनका प्रधान विषय है– ज्ञान और अध्यात्म। लेकिन समाज से कष्ट कर चलने वाला ज्ञान और आध्यात्म कबीर का साध्य नहीं है। वे जिस समाज और युग में रहे हैं। उनके प्रति अपने उत्तरदायित्व का निर्वाह करना अपना धर्म मानते हैं। यही कारण है कि अनेक स्थलों पर वे एक अक्खड़ उपदेश या रूक्ष समाज सुधारक बन जाते हैं। जो समाज सुधार की धुन में काव्य और अध्ययन को भूलकर सीधी सरल अभिव्यक्ति और व्यंग्य बौछार पर उत्तर आते हैं।

कबीर का समाज सुधारक रूप :

कबीर का समाज सुधारक रूप ही अधिक सुन्दर रहा है। समाज में व्याप्त वैमनस्य, पारस्परिक द्वेष,हिंसा, भेद–भाव, छूआ–छूत और वर्णभेद देखकर उका हृदय आक्रोश से भर उठा। उन्होंने सामाजिक कुप्रवृत्तियों विषमताओं, आडम्बरों और अंधविश्वासों पर करारा व्यंग्य किया तथा समाज को श्रेष्ठ बनाने का भरसक प्रयास किया। कबीर का मूल उद्देश्य लोक कल्याण था। लोक कल्याण के भाव से प्रेरित होकर ही उन्होंने समाज के विविध चित्र प्रस्तुत किया। वास्तव में समाज रूप में कबीर सर्वाधिक विख्यात डॉ. पंजाबीलाल शर्मा का मत है ''वे (कबीर) अंधविश्वासों, आडम्बर, पाखण्डों और गतानुगतिकत के विरोधी तथा सच्चे सत्याग्रही थे, जीवन –पर्यन्त सार–सत्य का सूप–वृत्ति से संग्रह करने वाले बुराईयों से जुझने वाले थे।'' किन्तु सुफियों की प्रधान विशेषता उनका प्रेमजन्य है।

कबीर समाज सुधारक के निम्न रूप हैं –

1. हिन्दु–मुस्लिम एकता पर बल –

कबीर के समय में हिन्दू और मुसलमानों में पारस्परिक वैमनस्य बढ़ रहा था। मुसलमान शासक हिन्दुओं पर अत्याचार कर रहे थे तथा अधिकांश जनता को मुसलमान बना लेना चाहते थे। ऐसी विषम स्थिति में कबीर ने हिन्दू और मुसलमानों दोनों की निर्गुण ब्रम्हों की आराधना का उपदेश दिया और पारस्परिक द्वेष को दूर कर प्रेम भाव जगाने का भागीरथ प्रयास किया। उन्होंने कहीं 'हिन्द तुर्क की राह एक है सतगुरू इहै बतायी।' कबीर उन महापुरूषों में से थे जो युग परिवर्तन कर देते हैं। युग के प्रवाह को बल पर समाज में क्रांति पैदा कर देते हैं और उसका नेतृत्व करके समाज को शीर्षासन पर पहुंचा देते हैं। महापुरूषों में जिन गुणों का होना अनिवार्य होता है वे सभी गुण कबीर में पूर्णतया विद्यमान थे।

2. बाह्याडम्बरों का विरोध –

कबीर ने समाज में व्याप्त कुरीतियों एवं बाह्याडम्बरों का प्रबल विरोध किया। उन्होंने हिन्दू औरर मुसलमान दोनों की उपासना पद्धतियों की आलोचना की –

''पाहन पूजै हरि मिलै तो मैं पूजूँ पहार।
तावे यह चाकी भली पीस खाय संसार।।'' **(3)**

इस प्रकार –

''काकर पाथर जोरि है मस्जिद लई बनाय।

ता चढे मुल्ला बांगदे, क्या बहिरा हुआ खुदाय।।'' **(4)**

3. जांति– पाति का खण्डन –

कबीर के समय वर्ण व्यवस्था का बोल–बाला था। ब्राम्हण और शूद्रों में बहुत अन्तर था। कबीर ने ब्राम्हणों पर व्यंग्य करते हुए कहा कि यदि तू ब्राम्हण का पुत्र है तो माता के उदर (पेट) से ही क्यों पैदा हुआ, किसी और मार्ग से संसार में क्यों नहीं आया –

'जो तू ब्राम्हन –ब्राम्हनी जाया। आन बाट है क्यों नहीं आया।'

उन्होंने सभी को समझाते हुए कहा कि जाति से कुछ नहीं होता , हरि –भजन ही सर्वोपरि है। जाति–पाति पूछै नहीं कोय हरि को भजै सो हरि का होय। जाति का विरोध के आधार पर भेदभाव का विरोध करते हुए बारम्बार समझाया कि सब में उस परमात्मा का ही अंश है –

जाति न पूछो साधु की पूछो उसका ज्ञान।
मोल करो तलवार का पड़ी रहन दो म्यान।। **(5)**

4. कथनी–करनी में एकरूपता –

कबीर दास जी आजीवन लोक में व्याप्त भ्रान्तियों अंधविश्वासों और कुरीतियों के निराकरण का प्रयास करते रहे। उनकी सबसे बड़ी विशेषता थी कथनी और करनी में एकरूपता अर्थात् वे जो कहते हैं, वही करते हैं। उन्होंने जनता का भी कथनी –करनी अभेद की स्थापना का उपदेश दिया। उनका विचार है कि –

कथनि ताजि करनी करे, विष से अमृत होय।

कबीर ने समाज और धर्म के ठेकेदारों पर कड़ा व्यंग्य किया है। उन्होंने जाति–पाति, पूजा–पाठ, तीर्थाटन, जप–तप, मन्दिर–मस्जिद , पण्डित शेख, मुल्ला– मौलवी और शक्ति सभी पर कई व्यंग्य बाण छोड़ है। डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इस सम्बंध में सत्य लिखा है–

''सच पूछा जाए तो आज तक हिन्दी में ऐसा जबरदस्त व्यंग्य लेखक पैदा ही नहीं हुआ।'' उनकी साफ चोट करने वाली भाषा, बिना कहे भी सब कुछ कह देने वाली शैली और अत्यन्त सादी किन्तु अत्यन्त तेज प्रकाशन – भगी अनन्य साधारण है।

कबीर का साहित्य के क्षेत्र में –

कबीर दास जी साहित्य के क्षेत्र में अनन्य प्रतिभाशाली कवि की हिन्दी साहित्य में उपेक्षा ही हुई है। इस अपेक्षा के मूल में रसवादी आलोचकों की संकीर्ण और आदर्शपरक सीमित दृष्टिकोण प्रधान कारण रहा है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने कबीर आदि की तीन बातों के कारण उपेक्षा की है – (1) उपदेश और धर्म की नीरस चर्चा, उलट–बासियां तथा सुनी –सुनाई बातों का पिष्टपोषण। (2) श्रृंखलाबद्ध सुव्यवस्थित दार्शनिक विचार धारा का अभाव तथा विभिन्न विचारधाराओ का असंगत मिश्रण (3) आषा और शैली का अव्यवस्थित रूप। उपर्युक्त त्रुटियों के रहते हुए भी शुक्ल जी को अन्त में मानना ही पड़ा कि ''प्रतिभा उनमें बड़ी प्रखर थी, इसमें संदेह नहीं।'' साहित्य में शक्तिशाली, मानकर चलने वाले प्रखर आलोचक शुक्ल जी से हिन्दी साहित्य में अपनी प्रखर प्रतिभा की धाक मनवाने वाले एक मात्र कबीर ऐसे हैं, जिनकी शुक्ल जी ने विरोध करते हुए प्रशंसा की है। यह कबीर की बहुत बड़ी विजय है।

कबीर ने विषमताओं से त्रस्त मानवता हो हर प्रकार के अन्याय का विरोध करने की शक्ति प्रदान कर युगजीवन की धारा को मोड़ने का ऐतिहासिक कार्य किया था। हिन्दी साहित्य में शुद्ध साहित्य की दृष्टि से तुलसी और सूर तथा विषय के महत्व की दृष्टि से तुलसी और कबीर अद्वितीय माने जाते हैं। तुलसी में अपने आदर्श के कारण जहां शक्ति , बल और उत्साह मिलता है। वहां कबीर में जीवन की प्रधान समस्या सामाजिक विषमता की ओर हमारा ध्यान आकर्षित कर चिंतन की प्रेरणा मिलती है। इस क्षेत्र में कबीर अद्वितीय है। अपनी इसी सार्वजनिक भावना के कारण वे जनता में विशेष लोकप्रिय प्राप्त हो सके। रसग्राहिकों और कला पिपासुओं ने कबीर का विशेष सम्मान कभी नहीं किया। भ्रातृ भावना और समता की दृष्टि कबीर के पहले इस रूप और कहीं भी दिखाई नहीं पड़ती।

इस तरह की घोषणा करने वाले सर्वप्रथम व्यक्ति कबीर थे। इस तरह कबीर मानवता के प्रथम कवि सिद्ध होते हैं। कबीर ने कविता क्यों की ? यदि इस प्रश्न का उत्तर जान लिया जाए तो हम कबीर की काव्य –शास्त्र संबंधी त्रुटियों को क्षमा कर उनका उचित मूल्यांकन कर सकेंगे। धर्म सुधारक उपदेश के रूप में जो कुछ कहा है, वह खण्डन मण्डन की भावना से ओत–प्रोत होने के कारण नीरस, शुष्क एवं कर्कष भाषा में है। उसमें साहित्य सौन्दर्य का अभाव है। इसका कारण यह है कि 'शुद्ध कविता करना – कबीर का लक्ष्य नहीं

था। कविता को तो उन्होंने अपने भावों तथा विचारो को जनता तक पहुंचने का मध्यम बनाया था। उन्होंने न 'मसी कागद' हुआ था और न 'कलम हाथ गाही' थी, वे तो केवल ईश्वरीय एवं मानवीय प्रेम का ढाई अक्षर पढ़कर पण्डित हो गये थे। कवि के लिए आपेक्षिक गुणों, प्रतिभा, शिक्षा और अभ्यास में से कबीर में केवल प्रतिभा थी। उनके ज्ञान का साधन एवं स्त्रोत सत्संग और पर्यटन था। वे बहुश्रुत थे। कबीर के हृदय में सच्चाई थी और आत्मा में बल, इसलिए उनकी वाणी में अतनी शक्ति आ गयी थी। उनकी वाणी की यह शक्ति ही काव्यगत सरसता बनकर पाठकों के हृदय को प्रभावित करती है। कबीर का व्यक्तित्व प्रत्येक क्षेत्र में क्रांतिकारी था। उनका यह क्रांतिकारी व्यक्तित्व भक्त, प्रेमी, सुधारक तथा शुद्धि मानव की विभिन्न धाराओं में प्रवाहित हुआ है। उनके प्रत्येक रूप में सर्वत्र एक प्रखरता , स्पष्टता एवं निश्छलता है। उन्होंने अपने अशिक्षित होने की बात बड़े स्पष्ट और निश्छल शब्दों में कह थी थी, परन्तु उन्हें अपने सांसारिक अनुभव और ज्ञान की शक्ति पर पूर्ण आस्था थी। इसी को उन्होंने शिक्षित पण्डितों को ललकार कहा था – **''तू कहता कागद की लेखी , मैं कहता आँखिन की देखी।''(6)** उनकी आँखिन की देखी बात वहां तक तो ठीक है , जहां तक उन्होंने भगवान के प्रेम में तन्मय होकर अपनी भक्ति भावना का प्रदर्शन किया है। प्रकृति प्रदत्त काव्य –शक्ति उनका साथ छोड़ देती है। इसका कारण यह है कि तर्क के लिए शास्त्रीय बुद्धि एवं की अपेक्षा होती है। कबीर में मस्तिष्क तो था, परन्तु उनका शास्त्रीय ज्ञान न के बराबर था। वह केवल सुना–सुनाया था, उनमें गंभीरता नहीं थी। इसी से वे इस क्षेत्र में आकर लड़खड़ा उठते हैं। धर्म गुरू के रूप में कोई भी व्यक्ति चाहे कितना ही महान् क्यों न हो, परन्तु यदि उनका साहित्य रूप नगण्य है, तो साहित्य की दृष्टि से उनका अधिक मूल नहीं रह सकता है। इसलिए कबीर को अपने युग का साहित्यिक नेता एवं भावी साहित्य की विचार धारा के प्रभावित करने वाला सिद्ध करने के लिए उनके काव्य में साहित्यिकता को भी परखना पड़ेगा। यद्यपि कबीर पढ़े –लिखे नहीं थे, परन्तु उनमें काव्य सृजन का प्रखर प्रतिभा थी। कबीर साधक थे। उनकी साधना के भी दो रूप थे – कर्म योग और हठ योग कर्मयोगी के समान वे संसार की माया में निर्लिप्त रहते हैं। उनकी कथनी और करनी में साम्य था। परन्तु उन्होंने संसार के संघर्ष में पलायन का उपदेश कभी भी नहीं दिया। वे उससे टक्कर लेने के पक्षपाती थे। कबीर के युग दृष्टा थे। अपने समय में सम्पूर्ण गतिविधियों पर उनकी नजर रहती है। गांधी आधुनिक युग के अत्यन्त जागरूक दृष्टा थे। युग दृष्टा शाश्वत काल से

विषमताओं का खण्डन कर मानवता का प्रचार करते आये हैं। बुद्ध ने यही किया, तुलसी का प्रयत्न भी यही रहा और गांधी जी ने भी इसी के लिए अपना बलिदान करदिया। इन्हीं महान मानवों के समाज कबीर अपने समय की जनता के एकमात्र प्रतिनिधि और पथ प्रदर्शक थे। वे सत्य को परमात्मा मानते थे। इसी से वे अपने को 'सत्यनाम का उपासक' कहते थे। भौतिक शक्ति उन पर विजय पाने में असमर्थ रही थी।

उपसंहार

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर कबीर दास जी परम तत्व निर्गुण तथा सगुण दोनों से परे की वस्तु और अनुभव में आने पर भी अनिव्रचनीय है। कबीर ने अपने विचारों को जनसाधारण के ह्रदय तक पहुंचाने की अपूर्व क्षमता थी। क्योंकि कबीर ने दर्शन गुढ़ातिगूढ़ सिद्धांत एवं विचारों को अत्यन्त सरल एवं सुबोध बनाकर जनता के सामने रखे है। कबीर ने अपने दार्शनिक विचारों का अत्यन्त सरल तथा सीधी–सादी भाषा में जनता के सामने प्रस्तुत किया है। कबीर के ह्रदय में सच्चाई थी और आत्मा में बल इसलिए उनकी वाणी में इतनी शक्ति आ गयी थी उनकी वाणी की यह शक्ति ही काव्यगत सरसला बनकर पाठकों में ह्रदय को प्रभावित करती है। परन्तु आत्मा से सच्चे उद्‌गार होने के कारण स्वतः ही आ जाती है। कबीर की व्यक्तित्व प्रत्येक क्षेत्र में क्रांतिकारी था। उनका यह क्रांतिकारी व्यक्तित्व भक्त प्रेमी सुधारक तथा शुद्ध मानव की विभिन्न धाराओं में प्रवाहित हुआ है। उनके प्रत्येक रूप में सर्वत्र एक प्रखरता , स्पष्टता एवं निश्छलता है। कबीर में मष्तिष्क तो था, परन्तु उनका शास्त्रीय ज्ञान न के बराबर था वह केवल सुना–सुनाया था। उनमें गम्भीरता नहीं थी। उनका वास्तविक एवं स्वाभाविक क्षेत्र काव्य की दृष्टि से तो ह्रदय था इसी से सरसता केवल वहीं मिलती है। कबीर के काव्य में संदेश की प्रधानता मिलती है। इसी से उनमें कल्पना तत्व की न्यूनता है। इस न्यूनता के कारण उसके चित्र अस्पष्ट और अधूरे हैं। यह विशेषता केवल कबीर के काव्य में ही नहीं, अपितु समस्त सिद्ध एवं सन्त साहित्य में पाई जाती है। वे जिस युग में हुए उस युग में बहुत आगे की बातें कह रहे थे। जो कवि नेता या सुधारक इस व्यवस्था का जितना मौलिक और तीव्र विरोध करता है। कबीर के काव्य में किसी प्रकार का दिखावा नहीं है क्योंकि वे जो भीतर से हैं वही बाहर से भी हैं। कथनी और करनी की इस अभिन्नता ने कबीर के काव्य में अडिग विश्वास का ऐसा स्तर भर दिया है। जो हिन्दी साहित्य के अनन्य है। कबीर जिस समाज में रहते थे वे अत्यन्त गर्हित, आचारबहुल और ढकोसले का पर्याय

था। उन्होंने अपने बचपन से देखा था कि मनुष्य के रूप में मनुष्य की पहचान खो गयी है । कबीर दास ने अत्यन्त आश्चर्य के साथ देखा था कि सत्य को भूलकर लोग असत्य के पीछे पड़े हैं। कबीर दास समस्त बाह्य आडम्बर को भेदकर सत्य का संधान करने की प्रबल आकाश लेकर उपस्थित हुए थे। धर्म का जो रूप उस समय था वह अत्यन्त हीन और अनैतिक था। कबीर दास अपने युग के प्रोटेस्टेट सुधारक थे। कबीर दास का काव्य हमें जीवन, समाज और काव्य की मूलभूत समस्याओं पर विचार करने के लिए बाध्य करता है। स्वयं साक्षर न होने के कारण उनके लिए स्वयं अपनी रचनाओ ंको लिपिबद्ध करना संभव नहीं था। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जी ने कबीर साखियों की भाषा को 'सुधुक्कड़ी ' कहा है। सुधुक्कड़ी से उनका आशय राजस्थानी, पंजाबी और खड़ी बोली के मिश्रण से है। आश्चर्य की बात है कि एक ही प्रमाणिक पाठ के आधार पर तीन विद्वान तीन विभिन्न निष्कर्षों तक पहुंचे है। वे औपचारिक अनुभूतियो को अनौपचारिक भाषा में व्यक्त करने वाले कवि हैं, उनकी भाषा –काव्य की व्यंजना बिल्कुल सटीक और लक्ष्यभेदी होती है।

लोक जीवन के अध्येता कबीर कवि, साधक तथा समाज– सुधारक तीनों रूपों में हमारे सामने आती है। प्रत्येक कवि समकालीन सामाजिक भावनाओं का प्रतिनिधित्व करता है। साथ ही वह पथ प्रदर्शक भी होता है। लोक जीवन में उन्नयनकारी प्रवृत्तियों का सर्वथा अभाव था। कबीर ने समाज सुधार की चेतना से विरोधी संस्कृतियों के समन्वय की उनमें विशाल प्रभाव थी, जिनके कारण वे इतने महान बन सके। प्रेम की अनेक रसात्मक अनुभूतियों को उन्होंने संबंध भावना के साथ व्यक्त किया है। कबीर की साधना में आत्म विश्वास के साथ आराध्य के प्रति आस्था है। कबीर के लिए कविता साध्य न होकर साधक थी , अपनी सीधी–सच्ची भावनुभूतियों के जनमानस तक पहुंचाने के उद्देश्य से उन्होंने काव्य रचना की है।

संदर्भ सूची

1. दास, डॉ. श्यामसुन्दर, **कबीर ग्रंथावली**, प्रकाषन केन्द्र लखनऊ, सातवां संस्करण, पृ. 22।
2. www.ignca.nic.in - Kabirdas – Jeevan Parichay
3. दास, डॉ. श्यामसुन्दर, **कबीर ग्रंथावली**, प्रकाषन केन्द्र लखनऊ, सातवां संस्करण, पृ. 10।
4. वही, पृष्ठ 10।
5. वही, पृष्ठ 57।
6. www.kavitakosh.org – तेरा मेरा मनुवां/कबीर।